

कहानी अध्ययन-अध्यापन में चयन, नैतिक मूल्य एवं शिक्षा का द्वंद्व

ऋतु बाला*

प्रस्तुत शोध-पत्र कहानी कहने-सुनने एवं पढ़ने-पढ़ाने की संस्कृति के साथ शिक्षणशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य से संलग्न होने का एक प्रयास है। यह शोध-पत्र शिक्षणशास्त्रीय प्रश्न रखता है, जैसे— (1) पाठ्यपुस्तक में शामिल की जाने वाली कहानी के चुनाव के समय क्या पैमाना होना चाहिए? दूसरे शब्दों में पाठ्यपुस्तक में शामिल किए जाने के लिए एक अच्छी कहानी का पैमाना क्या हो? (2) पाठ्यपुस्तक में कहानी की प्रस्तुति करते समय कौन-से मुद्दे हमारे सामने होते हैं? (3) कहानी के पठन-पाठन का उद्देश्य क्या होना चाहिए? (4) विद्यालय स्तर पर हिंदी की कहानी अध्ययन-अध्यापन के संदर्भ में किस तरह का शिक्षणशास्त्रीय विमर्श उपलब्ध होता है? प्रस्तुत शोध-पत्र भाषा के सामान्य उद्देश्यगत विमर्श एवं कहानी के शिक्षणशास्त्रीय विमर्श से प्रस्तुत शोध के लिए परिप्रेक्ष्य एवं विश्लेषण का तरीका विकसित करता है। भाषा के दर्शनशास्त्र से इस शोध-पत्र में अनुप्रयुक्त अवधारणाएँ हैं— हेर्मेनेउटिक्स और सामाजिक सांकेतिकता (Hermeneutics and Social Semiotics)। इसके अतिरिक्त कहानी की प्रस्तुति का तुलनात्मक विधि से विश्लेषण किया गया है। शोध-पत्र का क्षेत्र स्कूल के दो भिन्न भाषाई जगत (हिंदी और अंग्रेजी) हैं। शोध में यह भी देखने की कोशिश की गई है कि कहानी की एक समान विषय-वस्तु के साथ दो भिन्न भाषाई प्रस्तुति का शिक्षणशास्त्रीय निहितार्थ क्या है।

पाठ्यपुस्तक की अपनी एक विशिष्ट संस्कृति होती है और वह जीवन, समाज और देश पर अपना प्रभाव छोड़ती है। पाठ्यपुस्तक में पाठों का चयन एक विशिष्ट उद्देश्य को केंद्र में रखकर किया जाता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में हिंदी पाठ्यपुस्तक निर्माताओं के सामने पाठ निर्माण के समय कौन सी मुख्य बातें होती होंगी, इस बात को समझने के लिए कहानी विधा तक शोध-पत्र को सीमित किया गया है। सामान्य तौर पर पाठ्यपुस्तक निर्माताओं के सामने पाठ निर्माण के समय अग्रलिखित बिंदु होते हैं—

1. कहानी के माध्यम से विद्यार्थियों को वांछित मूल्य दिए जा सकते हैं।
2. कहानी के माध्यम से विद्यार्थियों में भाषिक क्षमताओं का विकास किया जा सकता है, जैसे—
 - शब्द भंडार में वृद्धि
 - व्याकरणिक समझ
3. कहानी के विस्तृत फलक की प्रतिनिधि कहानियों से परिचय कराना, जैसे—
 - कहानी की समयावधि को आधार बनाकर

* असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

- लोक कहानी के प्रतिनिधि के आधार पर
- विभिन्न विषयों के आधार पर
- संवेदना और मुद्दों की विविधता के आधार पर
- विभिन्न संस्कृतियों से परिचय कराने के संदर्भ में
- सर्वमान्य श्रेष्ठ कहानियों से परिचय

उपर्युक्त के अतिरिक्त कहानी का शिक्षणशास्त्र भी महत्वपूर्ण पहलू है जिसे अक्सर संज्ञान के क्षेत्र से बाहर रखा जाता है। पाठ्यपुस्तक बनाते समय शिक्षणशास्त्र के केंद्रीय महत्व को एक प्रश्न के माध्यम से समझा जा सकता है। वह प्रश्न यह है कि कहानी के संकलन एवं कहानी की पाठ्यपुस्तक में क्या अंतर होता है। इसका एक उत्तर यह है कि पाठ्यपुस्तक में शामिल कहानी के अंत में कहानी से संबंधित प्रश्न पूछे जाते हैं।

उपर्युक्त सवाल के कुछ उत्तर निम्नलिखित प्रकार से हो सकते हैं—

1. पाठ्यपुस्तक में शामिल कहानी का संबंध विद्यार्थियों की उम्र से होता है जो कि कक्षाबद्ध होता है।
2. उत्तरोत्तर कक्षा विकास के साथ पाठ्यपुस्तकों की कहानी सरल से जटिल की ओर बढ़ती रहती है।
3. कई मामलों में कहानी द्वारा भाषाई लक्ष्य उल्लिखित होते हैं, जैसे— व्याकरण।
4. कहानी के माध्यम से विद्यार्थियों में तयशुदा मूल्य दिया जा सके।

उपर्युक्त उत्तरों के आधार पर यह माना जा सकता है कि इन बातों में शिक्षणशास्त्र शामिल किया जा चुका है। परंतु अगर भाषा के शिक्षणशास्त्र पर और अधिक विचार किया जाए तो उपर्युक्त कसौटियाँ न

केवल भाषा शिक्षणशास्त्र के दर्शन के अधूरेपन को दिखाती हैं बल्कि कई मायनों में विरोधाभासी भी हैं।

भाषा के शिक्षणशास्त्र के केंद्रीय सरोकारों में से कुछ सरोकार निम्न हैं—

1. विषयवस्तु के साथ विद्यार्थियों को अपने साथ संलग्न होने का अवसर देना।
2. कहानी की संरचना का ऐसा होना जिसमें कहानी का अंत पूर्व में सरलता से अनुमानित न किया जा सके।
3. कहानी की बुनावट ऐसी हो जिसमें कोई एक सर्वमान्य, सर्वस्वीकृत, पूर्व निर्धारित अंत न हो।
4. कहानी में उस खुले आकाश का होना जिसमें विद्यार्थी उसके अनेकानेक विश्लेषण कर सकें।

कहानी के चयन के संदर्भ में अगर उपर्युक्त अनिवार्य तत्वों को शामिल न किया जाए तो ऐसी स्थिति में कहानी को पढ़ने में रचनावादी उपागम का सिमट जाना या ऊपरी तौर पर होना इसकी नैसर्गिक परिणति हो जाएगी। उदाहरण के तौर पर एक निजी विद्यालय में कक्षा 6 में हिंदी की मुख्य पाठ्यपुस्तक के साथ लगाई गई पूरक पठन की किताब *पिटारा* की कहानी को लिया जा सकता है। कहानी कुछ इस प्रकार है।

संगति का प्रभाव

एक वृक्ष पर तोते के दो बच्चे रहते थे। दोनों एक ही जैसे थे— हरे हरे पंख, लाल चोंच, चिकनी और कोमल देह। जब बोलते तब दोनों के गले से एक ही जैसी ध्वनि निकलती थी। एक का नाम था सुपंखी और दूसरे का नाम था सुकंठी।

सुपंखी और सुकंठी दोनों एक ही माँ की कोख से पैदा हुए। रंग रूप भी समान था, दोनों व्यवहार में

भी एक जैसे ही थे। एक दिन आसमान काले-काले बादलों से घिर गया और उस दिन तेज आँधी-तूफान की वजह से वे दोनों भी तेज आँधी से उड़कर कहीं दूर चले गए। सुकंठी एक पर्वत से टकराकर बेसुध हो ऋषियों के आश्रम में जा गिरा। सुपंखी आँधी से उड़ता हुआ चोरों की बस्ती में जा गिरा। दोनों की परवरिश अलग-अलग वातावरण में हुई। सुकंठी की परवरिश ऋषियों के पास हुई थी और सुपंखी की परवरिश चोरों की बस्ती में हुई।

कई वर्ष बीत जाने के बाद एक बार वहाँ का राजा घोड़े पर सवार होकर पशुओं के पीछे दौड़ता हुआ थककर सरोवर के पास विश्राम करने लगा। राजा को नींद आ गई। अभी वह आधी नींद में ही था कि किसी की तेज आवाज़ से उसकी नींद टूट गई, “पकड़ो, पकड़ो। यह जो व्यक्ति सो रहा है, यह राजा है। इसके गले में आभूषण है, इसे लूट लो, सब कुछ लूट लो। इसको मार के झाड़ी में डाल दो।”

राजा हड़बड़ा कर बैठा। सामने पेड़ की डाल पर एक तोता बैठा था। वही कटु वाणी में यह सब कुछ बोल रहा था। राजा को आश्चर्य हुआ। साथ ही उसे भय भी लगा। वह उठ खड़ा हुआ। वह अपने घोड़े पर सवार हुआ और जैसे ही चलने लगा तो तोता फिर बोला, “राजा जाग गया। देखो, देखो वह भागा जा रहा है। लो राजा गया। इसके आभूषण छीन लो” राजा वहाँ से बहुत दूर निकल गया और एक पर्वत की तलहटी में जा पहुँचा। पर्वत की तलहटी में ऋषियों का एक आश्रम था। उस समय सभी ऋषि-मुनि भिक्षाटन के लिए गए हुए थे। राजा ने ज्योंही आश्रम में प्रवेश किया, उसे मधुर वाणी सुनाई पड़ी, “आइए, ऋषियों के इस पावन आश्रम में आपका स्वागत है।” राजा ने चकित होकर सामने की ओर देखा— वृक्ष की डाल पर बैठा एक

तोता राजा का स्वागत कर रहा था। पहली नज़र में तो राजा को यही लगा कि यह वही तोता है, जो सरोवर के किनारे मिला था। वही रूप, वही रंग, आकार प्रकार सब कुछ वही। तोता फिर बोला, “राजन, आप हमारे अतिथि हैं, आप थके हैं, विश्राम कीजिए। जल लीजिए, आपको भूख भी लगी होगी, आश्रम के फल ग्रहण कीजिए।” राजा सोचने लगा नहीं, यह तोता वह नहीं है, जो सरोवर के किनारे मिला था। इसकी वाणी कितनी मधुर है, कोमल है और वाणी में कितनी विनम्रता और शिष्टता है।

तोता फिर बोला, “आप किस सोच में पड़ गए?” राजा बोला, “तुम्हारी मधुर वाणी सुनकर मैं दुविधा में पड़ गया हूँ। अभी कुछ समय पहले मुझे सरोवर के किनारे भी एक तोता मिला था।” तोता बीच में ही बोल पड़ा, “मैं सब समझ गया। वह मेरा जुड़वाँ भाई सुपंखी है और मैं हूँ— सुकंठी। एक ही माँ की कोख से पैदा होकर हम दोनों एक परवरिश में नहीं रह पाए। समय का ऐसा चक्र चला कि दोनों अलग हो गए। वह चोरों की बस्ती में पला और मैं यहाँ ऋषियों के आश्रम में।” कहते- कहते सुकंठी थोड़ा-सा रुका, फिर दुखी स्वर में बोला, “सुपंखी मेरा भाई है। लेकिन वह हमेशा चोरों की बस्ती में रहा। वहीं की वाणी, वहीं का परिवेश और आचरण उसके भीतर रच बस गए हैं।” राजा सुकंठी की समझ, उसके स्वभाव, वाणी और आचरण से चमत्कृत था। वह आश्रम में प्रवेश कर रहा था और धीरे-धीरे गुनगुना रहा था— जैसी संगति वैसी ही गति।

आइए, रचनावादी उपागम से इस कहानी की शिक्षणशास्त्रीय संभावना पर विचार करते हैं। इस संदर्भ में सबसे पहले इसके शीर्षक पर चर्चा करते हैं। कहानी का शीर्षक है— ‘संगति का प्रभाव’।

निम्नलिखित प्रश्नों के माध्यम से इस कहानी के शीर्षक के संबंध में रचनावादी उपागम की संभावना की दृष्टि से विचार किया जा सकता है—

1. कहानी के शीर्षक से विद्यार्थियों को आगे आने वाली कहानी के बारे में कितनी दूर तक ठीक-ठीक पता चलता है कि कहानी क्या होने जा रही है?
2. इस कहानी का गैर रचनावादी अंत क्या हो सकता है?

उपर्युक्त प्रश्नों पर विचार करने पर आए उत्तर एवं एक निजी विद्यालय की कक्षा में विद्यार्थियों से पहला प्रश्न करने पर, उनसे आने वाले उत्तर निम्नलिखित प्रकार से रहे—

1. कहानी में अच्छी संगति से पड़ने वाले असर की बात कही गई होगी।
2. कहानी में बुरी संगति से पड़ने वाले असर की बात कही गई होगी।
3. ऐसा भी हो सकता है कि एक तरफ अच्छी संगति में रहने वाले की बात हो और दूसरी तरफ बुरी संगति में रहने वाले की बात कही गई होगी। परिणामतः अच्छी संगति में रहने वाला अच्छा व्यक्ति बना होगा और बुरी संगति में रहने वाला बुरा व्यक्ति बना होगा। (इसके उलट उत्तर आने की संभावना बहुत ही कम है।)

अब दूसरे प्रश्न पर विचार करते हैं ‘इस कहानी का गैर रचनावादी अंत क्या होगा?’

इस प्रश्न के संदर्भ में उत्तर रहे— अंत में यह नैतिक शिक्षा होगी कि कहते हैं कि संगति हमेशा सोच विचार कर अच्छे लोगों की होनी चाहिए। उपर्युक्त उत्तर में थोड़े बहुत भाषाई फेरबदल की गुंजाइश हो सकती है पर कमोबेश यही उत्तर रहे।

कहानी का शीर्षक शिक्षणशास्त्रीय उपागम के तौर पर कितना केंद्रीय महत्व का हो सकता है, इसमें और गहरे उतरने के लिए इसी कहानी के भिन्न शीर्षक को देखा जा सकता है। यही कहानी राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा प्रकाशित कक्षा 6 की अंग्रेजी की पाठ्यपुस्तक में दी गई है। इसमें कहानी की तफ़सील और कहने के तरीकों में अंतर देखा जा सकता है। पर वह अंतर ऐसे मूलभूत नहीं है जो कहानी में चारित्रिक बदलाव ला सके। सिवाय इसके कि हिंदी वाली कहानी में पाठ्यपुस्तक निर्माता के पूर्व आकलन के अनुसार कुछ कठिन शब्दों पर विद्यार्थियों का विशेष ध्यान दिलाने के लिए उन्हें अलग रंग का कर दिया गया है। शब्दों का ध्यान खींचने के इस नवाचारी कहे जा सकने वाले भाषा के शिक्षाशास्त्र पर आगे चर्चा की गई है।

तत्काल संज्ञान में लाने के लिए यहाँ हिंदी की कहानी के शीर्षक एवं अंग्रेजी की कहानी के शीर्षक को अलग से अगल-बगल में रखा जा रहा है

शीर्षक एक—‘संगति का प्रभाव’, शीर्षक दो—‘द टेल ऑफ़ टू बर्ड्स’।

शीर्षक नंबर दो के पाठ का अवलोकन एक सरकारी विद्यालय में अभ्यास शिक्षण के द्वारा किया गया, जिसमें वही सवाल करके यह देखा गया जो निजी विद्यालयों के विद्यार्थियों से किए गए थे उनके उत्तर क्या आ सकते हैं जो सवाल पहले शीर्षक के तहत किए गए हैं—

1. प्रश्न नंबर 1 के संदर्भ में ऐसे उत्तर नहीं आए जो कहानी में घटने वाली घटनाओं का ठीक-ठीक तो नहीं पर मोटे तौर पर भी कहानी की रूपरेखा बता सकें।

2. प्रश्न नंबर 2 के संदर्भ में शीर्षक नंबर दो में ऐसी कोई संभावना दिखाई नहीं देती जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि विद्यार्थी इसके अंत का अनुमान लगा सकेंगे। इसका शिक्षणशास्त्रीय प्रभाव यह है कि शीर्षक एक में शिक्षणशास्त्रीय संभावना असफल होने की वजह से (काफी दूर तक कहानी के पूर्व अनुमानित होने की वजह से) विद्यार्थी के लिए कहानी उतनी रोचक नहीं रह जाती जितनी कि शीर्षक दो वाली कहानी है। क्योंकि इसमें कहानी के विकास का एवं अंत का विद्यार्थी ठीक से अनुमान नहीं लगा सकते कि कहानी में क्या होगा। अतः कहानी में उत्कंठा और रहस्य बनाए रखने का तत्व शामिल होने की वजह से वही कहानी विद्यार्थियों को पढ़ाने में अपेक्षाकृत अधिक सफल रही। अतः देखा जा सकता है कि शिक्षणशास्त्रीय दर्शन को केंद्र में रखकर शीर्षक का चुनाव, कहानी की शिक्षणशास्त्रीय संभावना को कितना खोलती है और कितना समेट देती है। पहला शीर्षक गैरनिर्मितवादी परिप्रेक्ष्य से चयनित माना जा सकता और दूसरे शीर्षक के पीछे माना जा सकता है कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्मितवादी उपागम काम कर रहा होगा। पहला शीर्षक घोषणावादी एवं निर्धारणवादी है इसलिए अच्छी कहानी की संभावना और सफलता शीर्षक पर भी निर्भर करती है।

कहानी की रचना में शिक्षणशास्त्रीय हस्तक्षेप पाठ्यपुस्तक में शामिल कहानियों का इतिहास यदि देखें तो यह कह सकते हैं कि साहित्य से अमूमन कहानी उठाकर पाठ्यपुस्तकों में शामिल कर ली जाती है। कई मामलों में विद्यार्थियों की उम्र के अनुसार कहानियों का चयन किया जाता है और इस क्रम में

कहानी का संक्षेपण एवं सरलीकरण किया जाता है। मूल कहानी जब पाठ्यपुस्तक में शामिल की जाती है तब पारंपरिक रूप से इतना ही हस्तक्षेप देखा जा सकता है। ज्यादा से ज्यादा कहानी के प्रारंभ में उसकी भूमिका और उसे हासिल किए जाने वाले व्याकरणिक उद्देश्यों का निर्धारण कर, उसे कहानी के ऊपर दे दिया जाता है। कहानी के अंत में एक नैतिक उपदेश की भी पंक्ति कई बार दी जाती है इसके अलावा कहानी के बीच कोई हस्तक्षेप नहीं देखा जाता। हाल के कुछ दशकों में पाठ्यपुस्तक में ढलने वाली कहानियों के ढाँचे में थोड़ा बहुत परिवर्तन देखने को मिल रहा है, उदाहरण के लिए, शोध-पत्र में शामिल कहानी 'टेल ऑफ टू बर्ड्स' (कक्षा 6 की अंग्रेजी की पाठ्यपुस्तक) रा.शै.अ.प्र.प. 2009 को लिया जा सकता है जिसमें कहानी के मध्य में आकर तीन बिंदु जोड़े गए हैं उसके बाद फिर से आगे की कहानी शुरू होती है। वे तीन बिंदु इस प्रकार हैं—

1. राजा समान आवाज़ फिर से सुनकर आश्चर्यचकित हो गया।
2. वह चिड़िया की सच्ची कहानी जान गया।
3. वह एक ऐसे ऋषि से मिला जिसने दोनों चिड़ियों के व्यवहार की व्याख्या की।

माना जा सकता है कि कहानी की प्रस्तुति में यह एक नवाचार है परंतु यह भी शिक्षणशास्त्रीय संभावनाओं से हीन तथ्यपरक है जिसका उल्लेख कहानी में ही है। कहानी ऐसा कोई पड़ाव पैदा नहीं करती जिससे विद्यार्थी अपने तरीके से कहानी में शामिल हो सकें, तरह-तरह से सोच सकें और अपने विभिन्न अनुभवों को इससे जोड़ सकें। इस तरह कहानी प्रस्तुति के प्रारूप में परंपरा से हटकर किए गए हस्तक्षेप में बाल केंद्रीयता की जो संभावना हो सकती

थी, उसे यहाँ गवा दिया गया। दूसरी पाठ्यपुस्तक *पिटारा* में भी कहानी प्रस्तुति के प्रारूप में परंपरा से हटकर पाठ्यपुस्तक निर्माता ने अपने अनुसार कठिन माने जाने वाले शब्द को लाल रंग से उभारा है। इन शब्दों पर ध्यान देने पर यह साफ़ दिखाई देता है कि ऐसा करने के पीछे भाषा का तकनीकी उपागम काम कर रहा है। यानि मंतव्य यह है कि यह कहानी पढ़ते हुए विद्यार्थी उल्लिखित शब्दों के अर्थ जान जाएँ और उनके शब्दकोश का विस्तार हो सके। माना जा सकता है कि यह भाषा अधिगम के उस उपागम की वजह से है जिसमें भाषा अधिगम एक विखंडित प्रक्रिया है। इसके अंतर्गत माना जाता है कि पहले भाषा का संवर्धन होता है फिर साहित्यिक रुझान पैदा करते हुए उसके रसास्वादन की ओर पाठक को बढ़ाया जाता है। ‘संगति का असर’ कहानी में पाठ्यपुस्तक निर्माता द्वारा उल्लिखित किए गए कठिन शब्द को उभारने की शैली विद्यार्थियों को यह मौका भी नहीं देती कि वह स्वयं ऐसे शब्दों का चुनाव कर सकें। हालाँकि, कहा जा सकता है कि उन्हें इस प्रारूप में भी ऐसा करने की मनाही नहीं है फिर भी पाठ्यपुस्तक की अधिकारिता की संस्कृति में शिक्षक एवं विद्यार्थियों द्वारा यह मान लिए जाने की पूरी संभावना है कि इस पाठ में उभारे गए शब्दों को जानना ही पर्याप्त होगा।

मूल्य वाहक के रूप में पाठ का संकोचन भारतीय स्कूल में हिंदी की कहानी पढ़ने-पढ़ाने के संदर्भ में रूढ़ संस्थानिक चरित्र एक सामान्य अनुभव है। वह यह है कि कहानी कहने से पहले ही यह तय कर लेना कि कहानी से निकालना क्या है? यानी कहानी का अंत क्या है? कहानी का अंत और कहानी के संदर्भ में अंतिम रूप से निर्धारित कर देने वाली बात क्या है? उसे अकादमिक भाषा में नैतिक उपदेश मूल्य के रूप में पहचाना जाता है।

निश्चित रूप से यह व्यस्क निर्धारित उपदेश होते हैं जो कहानी की व्यक्तिनिष्ठता को खत्म कर उसे वस्तुनिष्ठ बना देते हैं। यानी इस उपागम में यह मान लिया जाता है कि यह वह वैज्ञानिक रास्ता है जिससे गुजरते हुए सभी एक ही जगह पहुँचेंगे, चाहे गुजरने वाले आपस में कितने भी भिन्न क्यों न हों। शोध में उद्धृत कक्षा अवलोकन से इसी बात की पुष्टि होती है कि अध्यापिका इसी उपागम की राही रही हैं। इस उपागम में कहानी के सफ़र के मोड़ों, पड़ावों, नज़ारों का मज़ा लेने की गुंजाइश सिकुड़ जाती है। इसके साथ ही पूर्व निर्धारित स्टेशन यानी तय किए गए नैतिक उपदेश तक पहुँचने की हड़बड़ी शामिल होती है। कहा जा सकता है कि पूरी कहानी में मूल्य का लदाव पाठ से विद्यार्थियों को घुलने-मिलने का मौका नहीं देता। हिंदी अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में कहानी पढ़ने पढ़ाने की गतिविधि का मुख्य ध्येय, उद्देश्य, मूल्य नैतिकता के इस दुराग्रह के मनोविज्ञान का खुलासा करते हुए पुरुषोत्तम अग्रवाल कहते हैं कि हिंदी की कक्षा में घुसते ही हर बच्चा चरित्रहीन हो जाता है क्योंकि पाठ्यपुस्तक की सारी चिंता उसका चरित्र निर्माण करने की है (अग्रवाल, पृ. सं. 12)।

कहानी का चयन

कहानी के द्वारा नीति, उपदेश, मूल्य निचोड़ लेने के शिक्षणशास्त्र पर गिजूभाई (2006) की टिप्पणी है कि “कहानी द्वारा कहें या उपदेश द्वारा कहें, मुख से कहें या लेख से कहें, मनुष्य को नीति ज्ञान देने का जबरदस्त शौक लग गया है। इसका कारण कुछ और नहीं तो यह तो है ही कि मनुष्य में नीति की वृत्ति कहाँ से आती है और कैसे विकसित होती है इसका उसे वैज्ञानिक ज्ञान नहीं है” (बधेका, पृ. सं. 186)।

कहानी के नीतिपरक शिक्षणशास्त्र की परिणति पर इनका कहना है कि “अगर नीति शिक्षण के इतने अधिक प्रयत्नों से थोड़ी बहुत नीति भी बालकों में उत्तरी होती तो आज अनेक विद्यालयों में से नीति शिक्षण का कालांश हटा दिया होता अथवा हमें नीति नीति की पुकार आज करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती” (बधेका, पृ. सं. 186)।

कुमार (2006 एवं 2009) का मानना है कि कहानी सुनाने का उद्देश्य बमुश्किल ही बच्चों में चरित्र का विकास करना हो बल्कि इसकी जगह कहानी का उद्देश्य विद्यार्थियों में सुनने की क्षमता और संस्कृति का विकास करना, अनुमान लगाने की क्षमता का विकास करना, हमारे भौतिक जगत को विस्तार देने के साथ-साथ शब्दों को अपना मायने देना है। उनका मानना है कि कहानी के ज़रिए सांस्कृतिक अनुभवों की विविधता के साथ-साथ आज जो आधुनिक शिक्षा एवं जनसंचार माध्यमों के द्वारा एकहरी अभिव्यक्ति का जो संसार रचा जा रहा है उसके बरक्स यह विविधता का संसार रचने वाली प्रक्रिया होनी चाहिए।

कहानी शिक्षण के उद्देश्य पर प्रसिद्ध भाषा चिंतक ब्रिटेन ने कहा है कि कहानी शिक्षण का मतलब विद्यार्थियों को अन्य लोगों के अनुभव में प्रवेश कराना है। कोई भी बच्चा बीते हुए युगों के लोगों के जीवन में ऐतिहासिक तथ्यों और दूसरे देशों के लोगों के जीवन में स्वयं को शामिल करके भौगोलिक तथ्यों को समझता है। ऐतिहासिक और भौगोलिक मुद्दों का यह सहानुभव उसे उनके निर्वैयक्तिक मूल्यांकन की ओर ले जाता है। राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक सभी प्रकार के मानवीय मामलों में निर्णय वास्तविक और काल्पनिक दोनों प्रकार के अनुभवों से परे अनुभवों से उभरे दया भाव और समझ के आधार पर निर्मित होता है (बधेका, पृ. सं. 151)।

कहानी का शिक्षणशास्त्र एक तरह से परिस्थिति विशेष में पात्र विशेष के क्रियाकलापों, सोच विचारों एवं नज़रिए से विद्यार्थी से संवाद करना है। यह संवाद नैतिकोन्मुखी कहानी के शिक्षणशास्त्र में संवाद की संभावना पैदा करने के पहले ही खत्म हो जाता है।

संदर्भ

- अग्रवाल, पुरुषोत्तम. 2006. बच्चे, पाठ्यपुस्तकें और राजनीति. *शिक्षा विमर्श*. वर्ष 8. अंक-दो. मार्च-अप्रैल. दिगंतर. जयपुर.
- कुमार, कृष्ण. 2009. *वॉट इज़ वर्थ टीचिंग*. ओरियंट ब्लैकस्वान. नयी दिल्ली.
- . 1996. *बच्चे की भाषा और अध्यापक एक निर्देशिका*. नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली.
- बधेका, गिजूभाई. 2006. कथा कहानी का शास्त्र (अनु. राम नरेश सोनी). राजलदेसर, चुरू. मोंटेसरी- बाल- शिक्षण- समिति.
- ब्रिटेन, जेम्स. 2006. *भाषा और अधिगम* (अनु. प्रेम कुमार शर्मा). ग्रंथ शिल्पी, नयी दिल्ली.
- रा.शै.अ.प्र.प. 2009. *हनीकॉम* (कक्षा 6 की अंग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक). राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.